International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 15-12-2025, Accepted: 14-01-2026, Published: 29-01-2026
Volume 12, Issue 1, 2026, Page No. 53-54

भारतीय ज्ञान–बोध और आधुनिक हिन्दी निबंध

डॉ. सुजाता कुमारी
अतिथि प्राध्यापिका, हिन्दी विभाग, तमिलनाडु केन्द्रीय विश्वविद्यालय, तिरुवारुर, तमिलनाडु, भारत

सारांश
प्रस्तुत लेख आधुनिक हिन्दी निबंधों में भारतीय ज्ञान–परंपरा के स्वरूप, महत्व और समकालीन प्रासंगिकता का विश्लेषण करता है। भारतीय संस्कृति में 'ज्ञान' को केवल बौद्धिक अभ्यास नहीं, बल्कि जीवन–दृष्टि, नैतिक चेतना और आत्मिक उन्नयन का साधन माना गया है। इस संदर्भ में आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, रामधारी सिंह दिनकर, विद्यानिवास मिश्र और कुबेरनाथ राय जैसे प्रमुख हिन्दी निबंधकारों के विचारों का अध्ययन किया गया है। लेख में यह स्पष्ट किया गया है कि इन निबंधकारों ने वैदिक, उपनिषदिक और पौराणिक ज्ञान–परंपरा को आधुनिक सामाजिक, सांस्कृतिक और वैचारिक संदर्भों से जोड़ते हुए प्रस्तुत किया है। उनका लेखन यह सिद्ध करता है कि भारतीय ज्ञान केवल अतीत की धरोहर नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य को दिशा देने वाली जीवंत शक्ति है। निष्कर्षतः, आधुनिक हिन्दी निबंधों में ज्ञान–परंपरा परंपरा और आधुनिकता के बीच एक सार्थक संवाद स्थापित करती है तथा भारतीय चिंतन की निरंतरता और प्रासंगिकता को रेखांकित करती है।

मूल शब्दः भारतीय ज्ञान–परंपरा, आधुनिक हिन्दी निबंध, हजारीप्रसाद द्विवेदी, रामधारी सिंह दिनकर, विद्यानिवास मिश्र, कुबेरनाथ राय, भारतीय संस्कृति, दर्शन और जीवन–दृष्टि

भारतीय संस्कृति की आधारशिला 'ज्ञान' पर टिकी हुई है। यही ज्ञान भारतीय समाज को सहस्राब्दियों से आत्मिक, सांस्कृतिक और नैतिक स्तर पर निरंतर संजीवनी देता आया है। जहाँ पाश्चात्य सभ्यता ने विज्ञान, तर्क और प्रयोगशीलता को उन्नति का साधन माना, वहीं भारतीय परंपरा में ज्ञान, दर्शन और आध्यात्मिक चेतना को जीवन का केंद्रीय तत्व स्वीकार किया गया। आधुनिक हिन्दी निबंधों में यह ज्ञान–परंपरा केवल विचारात्मक स्तर तक सीमित नहीं रहती, बल्कि भारतीय मनीषा की मौलिक पहचान को भी स्पष्ट करती है।

इस संदर्भ में आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, रामधारी सिंह दिनकर, विद्यानिवास मिश्र और कुबेरनाथ राय जैसे प्रमुख हिन्दी निबंधकारों ने अपने लेखन के माध्यम से ज्ञान–परंपरा को समकालीन संदर्भों से जोड़ा है। उन्होंने यह प्रतिपादित किया है कि भारतीय ज्ञान अतीत की निष्क्रिय विरासत नहीं, बल्कि वर्तमान जीवन को दिशा और अर्थ प्रदान करने वाली सजीव प्रेरणा है।

भारत में 'ज्ञान' को केवल बौद्धिक अभ्यास नहीं, बल्कि सत्य, शिव और सुंदर की खोज माना गया है। यह ज्ञान व्यक्ति को आत्मोन्नति और लोक कल्याण दोनों हीं दिशा में ले जाता है। हजारीप्रसाद द्विवेदी ने 'भारतीय संस्कृति का स्वरूप' निबंध में लिखा है – "वेद कहने से 'कुरान' की भाँति किसी एक धर्म–ग्रंथ का बोध नहीं होता और न 'बाइबिल' की तरह एक समय के अनेक संतों की वाणियों के संकलन का बोध होता है। वेद एक सम्पूर्ण साहित्य है – और जैसा कि विंटरनित्स ने कहा है – वह एक 'होल ग्रेट लिटरेचर' का बोध कराता है । आधुनिक विद्वान नाना कारणों से एक ऐसे शब्द का व्यवहार करते हैं, पुराने आचार्यों के उन सम्पूर्ण ग्रंथों का बोध हो जाए, जिन्हें वे 'श्रुति' या अपौरुषेय ज्ञान मानते हैं । यह शब्द है वैदिक साहित्य।"[1] अर्थात् वेद न केवल धार्मिक ग्रंथ हैं, बल्कि वे उस परम 'ज्ञान' का प्रतीक हैं जो समस्त जीवन को दिशा देता है। भारतीय दृष्टि में ज्ञान का अर्थ है – वह चेतना जो मनुष्य को स्वयं और ब्रह्म के संबंध का बोध कराए।

वेद, उपनिषद् और पुराण भारतीय ज्ञान–परंपरा के मूल एवं प्रमुख आधार माने जाते हैं। इस संदर्भ में हजारीप्रसाद द्विवेदी का मत उल्लेखनीय है – "वेद हमारे सभी साहित्यिक और सांस्कृतिक विधि–विधानों का प्रेरक माना जाता रहा है। 'वेद' का अर्थ है – विशुद्ध ज्ञान।" [2] इस दृष्टि से ज्ञान कोई नया आविष्कार नहीं है, बल्कि सनातन प्रवाह है। भारतीय मनीषा यह मानती रही है कि ज्ञान अनादि है – हम केवल उसके अंशमात्र से परिचित हैं। यही विश्वास भारतीय चिंतन को अहंकार–मुक्त बनाता है और उसे संयम व निष्ठा से सम्पन्न करता है।

रामधारी सिंह दिनकर ने भी वैदिक परंपरा की जीवंतता को आधुनिक संदर्भों में देखते हुए कहा है कि – "उन्नीसवीं सदी में जब आर्यसमाज, ब्रह्म–समाज, थियोसॉफी और प्रार्थना–समाज के आंदोलन उठे तब उन सभी आंदोलनों के नेताओं ने इस बात पर जोर दिया कि वेद और उपनिषदें, ये हमारे देश की प्राचीनतम विद्याएं हैं जो आज के प्रसंग में भी सत्य और सुगंभीर हैं।" [3] यह कथन इस बात का प्रमाण है कि भारतीय ज्ञान–धारा समय के साथ गतिशील रही है; उसका स्वरूप परिस्थितियों के अनुसार रूपांतरित होता रहा है, पर उसका मूल सार, मानवता, सत्य और आत्मचेतना अपरिवर्तनीय रहा।

भारतीय ज्ञान–परंपरा में दर्शन का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। दर्शन का अर्थ केवल तर्क या बुद्धि नहीं, बल्कि जीवन–दृष्टि है। दर्शन का उद्देश्य मात्र बौद्धिक ज्ञान उत्पन्न करना नहीं है बल्कि व्यक्ति को उसके जीवन में सही मार्ग प्रदर्शित कराने वाला भी है। यह वाक्य भारतीय दर्शन के व्यवहारिक स्वरूप को स्पष्ट करता है। यहाँ ज्ञान जीवन से जुड़ा हुआ है; वह मनुष्य को मार्ग दिखाता है, न कि केवल विचार देता है।

हिन्दी निबंधकारों ने इसी भारतीय परंपरा को आधुनिक समाज के नैतिक, सामाजिक और राजनीतिक विमर्श से जोड़ा है। रामधारी सिंह दिनकर ने अपने निबंधों में दर्शन और जीवन को एकीकृत किया। उनका मानना था कि दर्शन तभी सार्थक है जब वह जन–जीवन की समस्याओं का समाधान दे। हजारीप्रसाद द्विवेदी ने दर्शन को भारतीय संस्कृति की आत्मा कहा है, वहीं विद्यानिवास मिश्र ने उसे जीवन के गूढ़ प्रश्नों की खोज बताया है।

भारत का ज्ञानदर्शन व्यक्ति और समाज दोनों के विकास का साधन है। हजारीप्रसाद द्विवेदी ने 'भारत की एक्य साधना' में लिखा है कि – "भारतवर्ष की ऐक्य–साधना अनेक क्षेत्रों में मूर्त हुई है... 'वेद' का अर्थ है विशुद्ध ज्ञान। बढ़ती हुई मानव–बुद्धि के साथ 'विशुद्ध ज्ञान' के सामंजस्य का प्रयत्न निरंतर होता रहा है।"

[4] यह विचार बताता है कि ज्ञान का प्रयोजन केवल बौद्धिक संतोष नहीं, बल्कि जीवन के हर क्षेत्र में सामंजस्य स्थापित करना है। यही कारण है कि भारतीय ज्ञान परंपरा में विज्ञान, कला, साहित्य, धर्म और समाज – सभी को एक ही चेतना से जोड़ा गया है।

हजारीप्रसाद द्विवेदी ने अपने निबंधों में ज्ञान को 'जीवन की एकात्म साधना' के रूप में प्रस्तुत किया है। उनके लिए भारतीय संस्कृति का मूल अर्थ ज्ञान का सतत प्रवाह है। द्विवेदी का दृष्टिकोण ज्ञान को किसी एक सीमा में बाँधता नहीं, बल्कि उसे सार्वभौमिक आयाम प्रदान करता है, जहाँ साहित्य, दर्शन और संस्कृति परस्पर पूरक रूप में उपस्थित हैं।

रामधारी सिंह दिनकर का लेखन ज्ञान को कर्म और चेतना से जोड़ता हुआ दिखाई देता है। उनके निबंधों में वैदिक और पौराणिक ज्ञान का आधुनिक संदर्भों में पुनर्पाठ मिलता है। दिनकर आत्मालोचना पर विशेष बल देते हैं और उनके अनुसार ज्ञान कोई स्थिर सत्ता नहीं, बल्कि निरंतर परिवर्तनशील प्रक्रिया है।

विद्यानिवास मिश्र ने ज्ञान को अनुभव और साधना के साथ संबद्ध किया है। वे मानते हैं कि भारतीय परंपरा में ज्ञान का आशय केवल बौद्धिक उपलब्धि नहीं, बल्कि आत्मा की शांति और साहस दोनों से जुड़ा हुआ है। इसी संदर्भ में उन्होंने लिखा है – "वेद की बात करता हूँ तो वहाँ लगता है जैसे पृथ्वी और अंतरिक्ष डरते नहीं, उदास नहीं होते, वैसे ही मेरे प्राण डरो मत, उदास मत हो ।

यथा पृथिवी चान्तरिक्ष च न बिभीतो न ऋष्यतः।
एवा में प्राण मा बिभेरेवा मे प्राण मा रिषः।।

यही शिक्षा बुद्ध ने, महावीर ने, अपनी विकट यात्राओं के द्वारा दी, यही शिक्षा हमारे संतों ने दी, हमारे जीवनकाल में महात्मा गांधी ने दी।" [5] यह उद्धरण स्पष्ट करता है कि ज्ञान केवल बौद्धिक चिंतन तक सीमित नहीं है, बल्कि वह जीवन को साहस प्रदान करने वाली शक्ति है, जो भय, निराशा और नकारात्मकता से ऊपर उठने की प्रेरणा देती है। कुबेरनाथ राय ने ज्ञान–परंपरा को सांस्कृतिक और ऐतिहासिक चेतना के व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखा है। उनका लेखन यह प्रतिपादित करता है कि ज्ञान केवल शास्त्रीय ग्रंथों तक सीमित नहीं, बल्कि लोकजीवन की परंपराओं, विश्वासों और अनुभवों में भी गहराई से निहित है। इसी संदर्भ में उन्होंने लिखा है – "अगस्त्य का नाम एक ओर तो श्री विद्या से जुड़ा होता है तो दूसरी ओर रामचन्द्र से । अगस्त्य संहिता एक पोथी है । उसमें आए अनेक मंत्रों के देवता राम और ऋषि अगस्त्य माने गए हैं । अगस्त्य के साथ राम का ताल–मेल कितना सटीक है, इसे हम दक्षिण–पूर्व एशिया के सांस्कृतिक इतिहास में देख सकते हैं । वहाँ पर भारत गुरु हैं – अगस्त्य और भारत नायक है – रामचन्द्र । स्याम, कंबोडिया, जावा, सुमात्रा, बाली, मलाया सर्वत्र रामकथा ही, धर्म परिवर्तन मात्र उपासना पद्धति बदल देने से न तो पूर्वज बदल जाते हैं और न परंपराओं की मृत्यु हो जाती है ।" [6] यह दृष्टिकोण भारतीय ज्ञान परंपरा की विश्वव्यापकता को उजागर करता है।

आधुनिक हिन्दी निबंधों में ज्ञान परंपरा केवल अतीत का गौरव नहीं, बल्कि वर्तमान के प्रश्नों का उत्तर है। दिनकर, द्विवेदी, मिश्र और राय सभी ने यह बताया कि आधुनिकता तभी सार्थक है जब वह परंपरा के ज्ञान से जुड़ी रहे। हजारीप्रसाद द्विवेदी कहते हैं कि – "यह विश्वास कि ज्ञान आनादि है और हम उसके अंशमात्र से ही परिचित हैं, भारतीय मनीषियों को एक अपूर्व संयम और निष्ठा से सम्पन्न बना देता है।" [7] यह संयम आज के युग में भी उतना ही आवश्यक है, जब सूचना तो अपार है, परंतु ज्ञान का विवेक लुप्त होता जा रहा है। भारतीय ज्ञान परंपरा का एक विशेष पहलू यह है कि यह केवल दार्शनिक नहीं, बल्कि सामाजिक और नैतिक दृष्टि से भी सक्रिय है। दिनकर के अनुसार ज्ञान का उद्देश्य समाज में चेतना जगाना है; हजारीप्रसाद द्विवेदी के लिए यह सांस्कृतिक एकता का सूत्र है; विद्यानिवास मिश्र के लिए यह आत्मिक संतुलन का माध्यम है; और कुबेरनाथ राय के लिए यह सांस्कृतिक निरंतरता का प्रतीक है। आधुनिक हिन्दी निबंधकारों ने ज्ञान को पाश्चात्य तर्कवाद के मुकाबले में नहीं, बल्कि उसके साथ संवाद के रूप में प्रस्तुत किया। उन्होंने दिखाया कि भारतीय ज्ञान–विज्ञान केवल अध्यात्म नहीं, बल्कि मानवता का विज्ञान है। इन निबंधकारों ने प्राचीन ग्रंथों के उद्धरणों और विचारधाराओं को आधुनिक संदर्भ में प्रस्तुत करते हुए एक सेतु का निर्माण किया है जो परंपरा और आधुनिकता के बीच संवाद स्थापित करता है। यह 'सेतु' ही आधुनिक हिन्दी निबंधों की सबसे बड़ी देन है, जिसने परंपरा को जड़ नहीं रहने दिया, बल्कि उसे समकालीन जीवन का अंग बनाया।

भारतीय ज्ञान परंपरा केवल ग्रंथों का संग्रह नहीं, बल्कि जीवंत संस्कृति है। यह व्यक्ति को अहंकार–मुक्त कर आत्मचिंतन की ओर ले जाती है। आधुनिक हिन्दी निबंधकारों ने इस परंपरा को आधुनिक युग की चेतना से जोड़ा, जिससे भारतीय संस्कृति की पहचान नई ऊर्जा के साथ सामने आयी। जैसा कि हजारीप्रसाद द्विवेदी का मानना था कि भारतीय संस्कृति का मूल स्वभाव इसी अखंड प्रवाह में निहित है, जहाँ नवीनता और परंपरा का तादात्म्य सहज रूप में ही देखा जा सकता है। यही अखंड प्रवाह आधुनिक हिन्दी निबंधों में ज्ञान परंपरा का आधार है, जो भारतीय चिंतन की आत्मा को आज भी जीवित रखे हुए है।

सारांशतः "आधुनिक हिन्दी निबंधों में ज्ञान परंपरा" विषय यह सिद्ध करता है कि भारतीय चिंतन केवल अतीत का गौरव नहीं, बल्कि भविष्य की दिशा भी है। दिनकर का कर्म – आधारित ज्ञान, द्विवेदी का सांस्कृतिक ज्ञान, मिश्र का आध्यात्मिक ज्ञान और राय का सांस्कृतिक – ऐतिहासिक ज्ञान – सब मिलकर यह बताते हैं कि ज्ञान ही भारतीय सभ्यता का चिरंतन प्रकाश है।

संदर्भ

1. हजारीप्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली, भाग– 9, सं. – मुकुंद द्विवेदी, पृ. सं. – 210
2. हजारीप्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली, भाग – 9, सं. – मुकुंद द्विवेदी, पृ. सं. – 171–172
3. दिनकर रचनावली, भाग – 8, सं. – नंदकिशोर नवल, तरुण कुमार, पृ. सं. – 83
4. हजारीप्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली, भाग – 9, सं. – मुकुंद द्विवेदी, पृ. सं. – 171–172
5. स्वरूप विमर्श, विद्यानिवास मिश्र, पृ. सं. – 55–56
6. निषाद बाँसुरी, कुबेरनाथ राय, पृ. सं. – 31
7. हजारीप्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली, भाग – 9, सं. – मुकुंद द्विवेदी, पृ. सं. – 171–172